जीवनआदर्शों के प्रदाता : कवि कुलगुरु कालिदास

Dr. Nayana C. Patel
Associate Professor in Sanskrit

'कवि कुलगुरु' कालिदास भारतीय साहित्य के जाज्वल्यमान रत्न हैं। काव्य मर्मज्ञों ने उन्हें 'कविता कामिनी का विलास' कहा है। राष्ट्र कवि कालिदास काव्य और नाटक दोनों में समान अधिकार रखते हैं। संस्कृत वांग्मय की ''अनामिका'' उपाधि केवल इसी महान कवि को प्राप्त है। कविताकामिनीकान्त तथा सरस्वती के वरदपुत्र महाकवि कालिदास परम शैव थे। इनकी प्रसिद्धि विश्व के समस्त देशों में महाकवि के रूप में है और उन-उन देशों के विद्वानों ने इन रचनाओं का अपनी भाषाओं में रूपांतर करके इनका सादर प्रचार एवं प्रसार किया है। ऐसा स्नेह अन्य किसी कवि की रचनाओं को प्राप्त नहीं हुआ।[1] उनके संदर्भ में प्रसिद्ध उक्ति है-

"पुरा कविना गणनाप्रसंगे कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदास।
अद्यापि तत्तुल्य कवेरभावादनामिकासार्थवती बभूव॥"

अर्थात् प्राचीन कवियों की गणना के विषय में उन्हें 'कनिष्ठिकाधिष्ठित' बताकर, उनकी तुलना में ठहरने वाले किसी अन्य प्रतिस्पर्धी कवि के अस्तित्व की संभावना का प्रत्याख्यान किया है। कालिदास भारतीय संस्कृति के चिरंतन आदर्शों को कान्तासम्मित अभिव्यक्ति प्रदान करने वाले सारस्वत कवि हैं। महाकवि कालिदास भारतीय साहित्य की सर्वश्रेष्ठ विभूति हैं। महर्षि अरविन्द का कथन है कि वाल्मीकि, व्यास तथा कालिदास प्राचीन भारतीय साहित्य की अंतरात्मा के प्रतिनिधि हैं और सबकुछ नष्ट हो जाने के बाद भी इनकी कृतिओं में हमारी संस्कृति के प्राणतत्त्व सुरक्षित रहेंगे। वास्तव में जातीय प्रतिभा ने सत्यं, शिवं और सुन्दरम् के अनुसन्धान में जो बहुमूल्य मणि-रत्न प्राप्त किए, वे सभी कालिदास की रचनाओं में एकत्र संनिविष्ट हैं।[2] भारतीय संस्कृति ने जिन मूल्यों को-आदर्शों को अपनी दीर्घकालीन साधना तथा अनुभव के आलोक में प्रतिष्ठित किया, उनकी नितांत मंजुल एवं प्रभविष्णु व्यंजना कालिदास के काव्यों में संपन्न हुई है। 'ईशावास्योपनिषद' में कहा गया है-"हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्" अर्थात् सत्य का मुख स्वर्ण कलश से ढंका हुआ है।[3] वस्तुत: जीवन की अग्नि को प्रज्जवलित रखने के लिए सौंदर्य के सुवर्ण का आकर्षण अत्यंत आवश्यक है। कालिदास ने सौंदर्य का, आ-कंठ एवं आ-प्राण आस्वादन किया था, किन्तु मूल्यों की तुला पर उसे कभी आत्यंतिक महत्त्व प्रदान नहीं किया। सौंदर्य-सागर के संपूर्ण आवर्त-विवर्तों में पाठक अथवा भावक को निमज्जित करा कर, कालिदास उसे शिवं के पुनीत आदर्श-लोक की ओर मोड़ देते हैं और अंतत: लौकिक प्रेयस के ऊपर पारलौकिक श्रेयस का अमर संदेश सुना जाते हैं। 'रघुवंश' में हम दिलीप के त्याग से यात्रा प्रारंभ कर अग्निवर्ण के उत्कट भोग में पहुँच जाते हैं। इस तरह त्याग और भोग एक बिंदु पर मिल जाते हैं। जिस उत्साह से महाकवि दिलीप की गौभक्ति को वर्णित करते हैं, उससे कहीं अधिक उत्साह के साथ भोग-विलास का भी वर्णन करते हैं। श्रेय और प्रेय जीवन का लक्ष्य है। कालिदास कभी श्रेय से प्रेय की ओर कभी प्रेय से श्रेय की ओर क्रियाशील रहते हैं। श्रेय की अनुभूति यहाँ आत्मिक सौंदर्य को घनीभूत करती है। आत्मा का उन्नयन ही अध्यात्म है और रघु का अपूर्व दान और दिलीप के अपूर्व त्याग का जो चित्रण हुआ है, वह उज्ज्वल आध्यात्मिक मूल्यों का निरूपण है। चरित्र के माध्यम से जीवन के अवदात मूल्यों का उद्भावन कालिदास का आत्मिक सौंदर्य है।

कालिदास के विचार एवं आदर्श तत्कालिन मान्यताओं से मिलते हैं। उनकी रचनाओं में जीवन, समाज, शिक्षा, राज्यतंत्र, नारीत्व, पुरुषत्व, प्रभृति सभी विषयों से सम्बंधित आदर्शों की अभिव्यक्ति हुई है। कालिदास धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष में विश्वास करते हैं-"धर्मार्थकामोक्षाणामवतारे।" (रघुवंश, 10/84) मोक्ष के लिए 'मुक्ति' 'अपवर्ग' 'अनपायिपद' 'अनावृत्तिमयपद' इत्यादि शब्दों का उन्होंने प्रयोग किया है।[4] मनुष्य को कर्म का फल भोगना पड़ता है और ज्ञान से कर्म दग्ध होता है। गीता के इस कथन में कालिदास विश्वास करते हैं-"इतरो दहने स्वकर्मणा ब्रवृते ज्ञानमेव वहिनना।" (रघुवंश, 8/20) कालिदास ने यज्ञ की महिमा का बार-बार निरूपण किया है। 'रघुवंश' में वे कहते हैं-"हे महात्मन! यज्ञाग्नि में विधिवत् डाली गई आहुतियों से वर्षा होती है जिससे शस्यों से नवजीवन प्राप्त होता है।" (रघुवंश, 1/62) 'रघुवंश' के तृतीय सर्ग में 'अश्वमेध' यज्ञ की महिमा का व्याख्यान है।

इसमें संदेह नहीं कि कालिदास का जन्म प्रकृति की मधुमयी गोद में हुआ था और उनका शैशव भी इसी में बीता था। आश्रम-वर्णन में कालिदास का अनुराग एवं आत्मीयता को देखकर यह मान लेने में कोई आपत्ति नहीं दिखाई देती कि उसकी कौमारावस्था भी प्रकृति की कोमल छाया में बीती। कालिदास की रचनाओं में तपस्या की महिमा का वर्णन अनेक स्थलों पर हुआ है। तपोवन हमारी भारतीय संस्कृति की पहचान है। तपोवन में आचार और शिष्टाचार भी है। राजा दुष्यंत तपोवन पहुँचते ही अपना राजमुकुट उतारकर आश्रम में प्रवेश करते हैं। आचार-विचार और पुष्पादि के माध्यम से सौंदर्य प्रदान करते हैं। आश्रम में पवित्रता की अनुभूति होती है। कालिदास ने भारतीय संस्कृति को इसीलिए तपोवनों में चित्रित किया है। 'रघुवंश' में वशिष्ठ आश्रम एवं वाल्मीकि आश्रम इसी सौंदर्य संस्कृति को अवदात रूप देते दिखाई पड़ते हैं। 'अभिज्ञानशाकुंतल' में 'धर्मारण्य' तथा 'तपोवनों' की हमारी आस्थाओं को शुद्ध करने की क्षमता का बहुत बार उल्लेख हुआ है। प्रथम अंक में दुष्यंत कहता है कि आओ हम लोग पवित्र आश्रम के दर्शन से अपने को पुनीत करें।[5] 'कुमारसंभव' में उमा और शिव की तपस्याओं का विशद वर्णन मिलता है। 'अभिज्ञानशाकुंतल' में तपस्विओं की महिमा का कथन किया गया है। ऋषि लोग बड़ी शांत प्रकृति के होते हैं, तथापि उनमें इतना तेज होता है।[6]

महाकवि कालिदास ने ऋषि मारीच के तप में तन्मय होने का वर्णन किया है। उन्होंने तप की महत्ता प्रदर्शित करते हुए आलेखित किया है कि ऋषि सांसारिक मोह-माया से विरक्त हुए दैहिक संतापों से दूर आश्रम में वृक्ष की ठूंठ के समान हो गए हैं। यहाँ तपस्या की उस अवस्था का वर्णन किया गया है कि जिसमें मनुष्य की आत्मा साक्षात ब्रह्मलीन होकर परमात्मा के दर्शन करती है। राजा दुष्यंत को इन्द्र द्वारा दैत्यों के नाश हेतु बुलाने पर आकाश मार्ग से जाते हुए मातलि ऋषि मारीच के आश्रम के विषय में बताते हैं कि यहाँ के ऋषि-मुनिओं का शरीर वल्मीक से भर गया है, छाती पर साँप की कैंचुलियाँ चिपक गई है, गले में सूखी बेलें उलझी हैं, कन्धों तक लटकी हुई जटाओं में पक्षिओं ने घोंसले बना दिए हैं।[7] कवि कालिदास ने अप्राप्य वस्तु भी तपस्या के प्रभाव से प्राप्य है, यह दर्शाया है। यहाँ और एक दृश्य का जिक्र हुआ है, राजा दुष्यंत मारीच के आश्रम में तपस्या में मग्न व समाधिस्थ ऋषियों को देखकर कहते हैं-यहाँ ये तपस्वी उन वस्तुओं के बीच में बैठकर तप कर रहे हैं, जिन्हें पाने के लिए अन्य ऋषि तपस्या किया करते हैं। यहाँ पर ये लोग कल्पवृक्षों के

वन की वायु पी-पीकर जीते हैं, सुनहरे कमल के पराग से सुवासित जल में स्नान करके पूजा-पाठ करते हैं, रत्नशिलाओं पर बैठकर समाधि लगाते हैं और अप्सराओं के बीच में बैठकर संयम साधते हैं। अन्यत्र कालिदास ने तपस्वियों के तप को अक्षय फलवाला प्रदर्शित किया है।

धार्मिक क्रियाकाण्डों के अंतर्गत दान का विशेष महत्त्व है। वेदों एवं ग्रंथों में वर्णित आख्यानों के अनुसार भारतभूमि पर अपना सर्वस्व अर्पण करने वाले अनेक दानवीर हुए हैं। मनु दान की महिमा प्रदर्शित करते हुए कहते हैं कि इस संसार में रहते हुए मानव जिस अभिलाषा से युक्त होकर दान करता है, वह उसे जन्म-जन्मांतर में प्राप्त करता है।[8] श्रद्धापूर्वक वेदज्ञानी ब्राह्मणों को नित्य दिए जाने वाले दान का वर्णन 'मालविकाग्निमित्र' में मिलता है।[9] 'रघुवंश' के पांचवे सर्ग में 'दान' का महत्त्व वर्णित है। दान करना त्याग का ही एक दूसरा रूप है। किसी वस्तु के प्रति मोह को त्याग कर निःस्वार्थ भाव से उसका दान करना उस मनुष्य की उदारता का परिचायक है।

व्यक्तिगत जीवन में कालिदास ने आत्मसंयम तथा आत्म बुद्धि को सविशेष महत्त्व दिया है। 'रघुवंश' में वे कहते हैं-रात्रि के अंतिम प्रहर में उठने से मन शांति तथा स्फूर्ति का अनुभव करता है। "पश्चाद्यामिनीयामात्प्रसादयिव चेतना।" (रघुवंश, 17/1) संध्या, ध्यान, पूजा, अर्चना इत्यादि जीवन को उदात्त बनाने के लिए अपेक्षित है। जो पूज्य एवं आराध्य हैं, उनके प्रति तनिक भी अनादर के भाव से मनुष्य का सुख-सौख्य खंडित हो जाता है।[10]

समाज में रहते हुए मनुष्य किसी न किसी रूप में एकदूसरे से सम्बन्धित है। संबंधों के इसी जाल को समाज कहते हैं। अत: इन संबधों को स्थापित करने तथा समाज को सुसंगठित करने व सुचारू रूप से चलाने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने-अपने कर्तव्यों का ज्ञान होना आवश्यक है। परिवार समाज की प्राथमिक इकाई है। परिवार के अंतर्गत माता-पिता, भ्राता-पुत्र, पति व पत्नी आते हैं। अत: परिवार को स्थायित्व प्रदान करने के लिए प्रत्येक पारिवारिक सदस्य को अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए। सामाजिक कर्तव्यों के अंतर्गत राजा, प्रजा, गुरु व मित्र आदि के कर्तव्य आते हैं। महाकवि कालिदास ने पारिवारिक और सामाजिक कर्तव्यों को विशेष रूप से आलेखित किया है। 'अभिज्ञानशाकुंतल' में उन्होंने राजा का कर्तव्य पीड़ितों की रक्षा करना बताया है। राजा दुष्यंत शिकार खेलते हुए एक मृग का पीछा करते हैं, वहाँ आश्रम के समीप दो ऋषिकुमार उन्हें शस्त्र चलाने से रोकते हुए कहते हैं-हे राजन! आश्रम का मृग है, इसे नहीं मारना चाहिए क्योंकि-

"तत्साधुकृतसन्धानं प्रतिसंहर सायकं।
आर्तत्राणाय व: शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि॥"[11]

कालिदास ने अपने राजाओं को प्रजा के प्रति कर्तव्यों की याद हमेशा दिलाई है। उनके राजा ब्राह्मणों के भक्त, प्रजा के भरण-पोषण की चिंता करनेवाले तथा प्रजा के सच्चे बन्धु थे। 'रघुवंश' के प्रथम, पंचम, अष्टम तथा चतुर्दश सर्ग में कालिदास ने सम्राट के इसी आदर्श को बार-बार संकेतित किया है। राजा का कर्तव्य केवल प्रजा की रक्षा ही नहीं, अपितु तपोवन भी राजा द्वारा रक्षणीय होते हैं; इसके भी कुछ उदहारण हमें मिलते हैं। उनका एक अतिरिक्त कर्तव्य तपोवन की रक्षा व तपोवन में होनेवाले यज्ञ की रक्षा करना है। 'विक्रमोर्वशीय' में प्रजा के प्रत्येक प्राणी की रक्षा करना राजा का कर्तव्य प्रदर्शित किया है। दानवों द्वारा उर्वशी को पकड़े जाने पर उसकी सखियाँ प्रलाप करती हैं।

राजा उन्हें धैर्य धारण करने के लिए कहते हैं । आपदग्रस्तों की रक्षा करना ही राजा का कर्तव्य है।

वैदिक युग से ही माँ पूजनीय रही है। इस सृष्टि में माँ का स्थान सर्वश्रेष्ठ है । मानव की जन्मदात्री व निर्मात्री दोनों ही माँ है । माता ममता का सागर है, इसीलिए वह लक्ष्मी के समान मान्या-पूजनीया है। माता का धर्म समाज, परिवार व संसार को स्वर्ग बनाना है। माता का कर्तव्य पुत्र का उचित पालन एवं उसके कर्तव्यों का ज्ञान कराना है । 'विक्रमोर्वशीय' में यही कर्तव्य-परायणता दिखती है । माता की झोली सदैव आशीर्वाद से भरी होती है। उर्वशी बहुत समय पश्चात लौटे अपने पुत्र द्वारा प्रणाम करने पर आशीर्वाद देती है-"वत्स ! पितरमाराधयन् भव।"[12] ममतामयी माता का चित्र यहाँ कालिदास ने बहुत ही बारीकी से वर्णित किया है।

पारिवारिक कर्तव्यों के अंतर्गत पिता का कर्तव्य प्रमुख है। भारतीय संस्कृति में पिता परिवार का कर्ता व रक्षक माना जाता है। गृहस्थाश्रम में रहते हुए पिता का कर्तव्य समस्त परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति करना, पारिवारिक तथा सामाजिक कर्तव्यों का पालन करना है। महाकवि कालिदास ने शकुंतला के गान्धर्व-विवाह का समाचार ज्ञात होने पर ऋषि कण्व द्वारा पिता के इस कर्तव्य को सुन्दर रूप प्रदर्शित किया है। इसी नाटक में कवि कालिदास ने पिता के कर्तव्य पालन एवं प्रेम का सुन्दर चित्रण किया है। महर्षि कण्व शकुंतला को विवाहोपरांत पतिगृह भेजने पर प्रसन्न भी होते हैं, साथ ही साथ दु:खी भी । आश्रमवासियों के व्याकुल होने पर उन्हें धैर्य रखने की सीख देते हुए कहते हैं-"अर्थो ही कन्या परकीय एव।"

महाकवि कालिदास ने जिस तरह से माता-पिता की पारिवारिक एवं सामाजिक जिम्मेदारियों का निर्वहन कैसे किया जाए उस और संकेत दिए हैं, उसी प्रकार से पत्नी के कर्तव्यों की ओर निर्देश किया है। उन्होंने पत्नी का कर्तव्य पतिगृह में ही रहते हुए, विस्मृत हो जाने पर भी दासी रूप में रहना, ऋषिकुमारों के द्वारा आलेखित किया है । राजा दुष्यंत शापवश शकुंतला को पहचानने से इन्कार करते हैं तो ऋषिकुमार पत्नी के कर्तव्य का स्मरण कराते हुए शकुंतला को वहीं छोड़ देते हैं और कहते हैं-

"यदि यथा वदति क्षितिपस्तथा त्वमसि किम्
पितुरुत्कुलया त्वया।
अथ तु वेत्सि शुचि व्रतमात्मन: पतिकुले तव दास्यमपि
क्षमम् ॥"[13]

हमें ज्ञात है कि संसार में पहले से ही गुरु का महत्त्व कितना रहा है ! गुरु ही मनुष्य का सच्चा मार्गदर्शक होता है। महाकवि कालिदास ने "गुरु का कर्तव्य योग्य शिष्य को अपनाना है" यह कथन राजा के माध्यम से वर्णित किया है क्योंकि शिष्य की अयोग्यता गुरु की बुद्धि का परिचायक होती है । 'मालविकाग्निमित्र' नाटक में गुरु गणदास और हरिदास में से गुरु की योग्यता अथवा श्रेष्ठता शिष्य की योग्यता अथवा श्रेष्ठता पर आधारित कर निर्णित प्रदर्शित की गई है। कालिदास वैदिक संस्कृति के ज्ञाता थे, उन्होंने गुरु के विद्यादान को मात्र व्यापार न बताकर सरस्वती पूजा माना है।

पौराणिक धर्म की भांति ही, कालिदास में मनु आदि स्मृतिकारों के प्रति आदर है । ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि वर्णों के निश्चित कर्तव्यों तथा ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास के निश्चित आश्रमों पर कालिदास ने जोर दिया है। समाज की उन्नति के लिए वे इनका पालन जरूरी समझते हैं।[14] उनके राजा प्रथम वय में ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, तो तृतीय वय में पुत्र को

राज्य देकर पत्नी सहित वन की 'तरुच्छाया' का सेवन करते हैं। (रघुवंश, 3.70) इस आधार पर हमें लगता है कि महाकवि कालिदास पौराणिक ब्राह्मणधर्म तथा वर्णाश्रमधर्म के प्रबल पोषक हैं। कालिदास की दृष्टि में जीवन का सत्य कर्म की अपेक्षा गंभीर अनुभूति में निहित है और भाव जहाँ चक्रित होता है, अन्तर मथित, आकुलित, और व्यथित होता है, इन्हीं क्षणों में जीवन का सत्य कला का सौंदर्य बनकर प्रस्फुटित होता है। कालिदास का कथन है कि जीवन का सत्य विविध और विचित्र घटनाओं में नहीं, बल्कि उसकी सार्वजनीनता, सार्वभौमिकता तथा घटनाओं से छनकर संपीड़ित होने वाले अनुभवों में निहित रहता है।[15] भक्ति भी मानवजीवन का सत्य है-आदर्श है। शिव के प्रति कालिदास की आस्था स्मरणीय है। 'ऋतुसंहार' को छोड़कर इनके प्राय: सभी काव्य-नाटकों में शिवास्था और भक्ति दृष्टिगत होती है। 'रघुवंश', 'कुमारसंभव' और 'मेघदूत' में घटना के माध्यम से शंकर के प्रति आस्था और भक्ति को व्यक्त किया गया है।

निष्कर्ष रूप में कहें तो हम कालिदास की कवित्व प्रतिभा को यहाँ अंशमात्र प्रस्तुत कर पाए हैं, वस्तुत: इनकी योग्यता को भारतीयों ने ही नहीं; अपितु विदेशियों ने भी बखानी है। इनकी कीर्ति-पताका चहुदिशी लहराई है। कालिदास की यह नितांत विशेषता रही है कि उन्होंने अपनी लेखनी को हमेशा मन की स्रोतस्विनी माना और उसे निरंतर लोक-कल्याण के हेतु बहने दिया। इनके द्वारा निर्मित पात्रों के माध्यम से उपदिष्ट होकर मानव अपना मार्ग प्रशस्त कर सकता है। महाकवि कालिदास ने 'रामायण', 'महाभारत' और पुराण साहित्य में निहित चरित्रों से भी उत्तम चरित्रों का सर्जन किया है, जिनका अनुकरण कर मानव आदर्श व्यक्तित्व और चरित्र का निर्माण कर सकता है। महाकवि कालिदास की सभी रचनाओं में हमें कर्तव्यों का सुंदर निर्वाह मिलता है। इन्होंने अपने नाटकों के पात्रों के माध्यम से उच्च आदर्शों एवं कर्तव्यों का मर्यादित रूप समाज के समक्ष रखा है, जो समाज को सदैव प्रेरणा देता रहेगा!

संदर्भ संकेत :

1. त्रिपाठी, ब्रह्मानंद / शास्त्री, पण्डित रामतेज : कालिदास-ग्रंथावली, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण-2023, पृ.655
2. तिवारी, डॉ.रमाशंकर : चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, षष्ठ संस्करण-1999, प्राक्कथन से
3. इशोपनिषद, 15
4. कालिदास : रघुवंश, 8/15, 7/51, 7/53
5. पुण्याश्रम दर्शनेन तावदात्मानं पुनीमहे। (अभिज्ञानशाकुंतल, अंक-1)
6. कालिदास : अभिज्ञानशाकुंतल, 2/7
7. वही, 7/11
8. मनुस्मृति, 4/234
9. त्रिपाठी, ब्रह्मानंद / शास्त्री, पण्डित रामतेज : कालिदास-ग्रंथावली, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण-2023, पृ.635 (मालविकाग्निमित्रम्, अंक-5)
10. कालिदास : रघुवंश, 1/79
11. कालिदास : अभिज्ञानशाकुंतल, 1/10
12. त्रिपाठी, ब्रह्मानंद / शास्त्री, पण्डित रामतेज : कालिदास-ग्रंथावली, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण-2023, पृ.558 (विक्रमोर्वशीयम्, अंक-5)
13. कालिदास : अभिज्ञानशाकुंतल, 5/25
14. व्यास, डॉ.भोलाशंकर : संस्कृत कवि-दर्शन, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, पुनर्मुद्रित संस्करण-2004, पृ.77
15. त्रिवेदी, डॉ.राजेन्द्र : कालिदास और तुलसी की सौंदर्य-चेतना, जय भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण-2007, पृ.165